SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

सनातन धर्म में सामाजिक समरसता और सहिष्णुता

देवेन्द्र सिंह यादव, पी.एच–डी.
सिंपल बट डिफरेंट स्टडी प्वाइंट कोचिंग, ग्वालियर मध्य प्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
देवेन्द्र सिंह यादव, पी.एच–डी.
E-mail : devendrayadav662@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 17/02/2025
Revised on : 18/04/2025
Accepted on : 28/04/2025
Overall Similarity : 00% on 19/04/2025

शोध सार

सनातन धर्म न केवल एक धार्मिक व्यवस्था है, बल्कि यह एक जीवन पद्धति है जो मानवता, करुणा, सहिष्णुता और समरसता की भावना को पोषित करती है। यह शोध पत्र सनातन धर्म के उन पहलुओं का विवेचन करता है जो सामाजिक समरसता और सहिष्णुता को बढ़ावा देते हैं। यह धर्म समस्त मानवता को "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना से जोड़ता है और विविधताओं में एकता की अवधारणा को साकार करता है। शोध में यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार सनातन धर्म में निहित सिद्धांत एवं व्यवहार आज के सामाजिक विभाजन और संघर्ष के युग में सामंजस्य स्थापित करने में सहायक हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, भक्ति आंदोलन, वेदों और उपनिषदों में निहित सहिष्णुता के आदर्श, रामायण और महाभारत के पात्रों के व्यवहार, और जाति व्यवस्था की मूल अवधारणा को भी विवेचित किया गया है। यह शोध वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सनातन धर्म की सामाजिक प्रासंगिकता को रेखांकित करता है और यह प्रदर्शित करता है कि सहिष्णुता एवं समरसता केवल धार्मिक मूल्य न होकर सामाजिक सौहार्द के आवश्यक आधार हैं।

मुख्य शब्द

सनातन धर्म, सामाजिक समरसता, सहिष्णुता.

प्रस्तावना

भारतवर्ष की सभ्यता एवं संस्कृति विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक मानी जाती है। इसकी नींव सनातन धर्म की उन आदर्श शिक्षाओं पर आधारित है, जो केवल धार्मिक नियमों तक सीमित न होकर मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को स्पर्श करती हैं। सनातन धर्म का उद्देश्य न केवल मोक्ष प्राप्ति है, बल्कि सामाजिक संतुलन, नैतिक मूल्यों की स्थापना और पारस्परिक सद्भाव का विकास भी है।

वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत, भगवद्गीता एवं पुराण जैसे ग्रंथों में सामाजिक समरसता एवं सहिष्णुता के दर्शन बार–बार होते हैं। 'वसुधैव कुटुम्बकम्', 'सर्वे भवन्तु सुखिनः', 'अहिंसा परमो धर्मः' जैसे सूत्र सामाजिक समरसता के आधार हैं, जो विभिन्न विचारधाराओं, संस्कृतियों एवं जातियों के मध्य सहयोग और सह–अस्तित्व की भावना का प्रचार करते हैं।

भारत की सामाजिक संरचना सदियों से विविधतापूर्ण रही है। विभिन्न भाषाएं, जातियाँ, धर्म एवं संप्रदाय यहाँ सह–अस्तित्व की भावना से रहते आए हैं। यह संभव हो सका है तो केवल सनातन धर्म की उस समावेशी प्रकृति के कारण, जिसने कभी भी किसी एक पंथ या सम्प्रदाय को ही सत्य नहीं माना, बल्कि 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' जैसे विचारों से अनेक मार्गों की स्वीकृति दी।

इतिहास गवाह है कि जब–जब समाज में कट्टरता, भेदभाव और असहिष्णुता बढ़ी, तब–तब संत कवियों, विचारकों और धार्मिक नेताओं ने समरसता का उद्घोष किया। संत कबीर, रैदास, तुलसीदास, गुरु नानक जैसे महापुरुषों ने धर्म की सच्ची आत्मा को पहचानते हुए सामाजिक समरसता और सहिष्णुता की नींव को और मजबूत किया। उनके विचार आज भी सामाजिक सौहार्द और सामूहिक उत्तरदायित्व का मार्गदर्शन करते हैं।

वर्तमान समय में जबकि वैश्वीकरण, तकनीक और राजनैतिक मतभेदों के कारण सामाजिक ताने–बाने में दरारें आती जा रही हैं, तब सनातन धर्म की सहिष्णुता और समरसता आधारित शिक्षाएं अत्यंत प्रासंगिक बन जाती हैं। यह शोध पत्र इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है, जो सनातन धर्म के इन मूल्यों को पुनः उद्घाटित कर, एक समतामूलक, शांतिपूर्ण और समरस समाज की स्थापना की ओर संकेत करता है। यह शोध पत्र इन्हीं दो मूल्यों के सामाजिक, धार्मिक और मनोवैज्ञानिक पक्षों की चर्चा करता है।

शोध उद्देश्य

1. सनातन धर्म में सामाजिक समरसता की अवधारणा को स्पष्ट करना।
2. सहिष्णुता के धार्मिक आधार और व्यवहारिक स्वरूप को विवेचित करना।
3. प्राचीन और आधुनिक सन्दर्भ में इन मूल्यों की प्रासंगिकता का अध्ययन करना।
4. समकालीन समाज में बढ़ती असहिष्णुता के समाधान हेतु सनातन धर्म के योगदान को प्रस्तुत करना।

सनातन धर्म की मूल अवधारणाएँ

सनातन धर्म के मूल स्तंभः सत्य, अहिंसा, करुणा, क्षमा और धर्म, सामाजिक समरसता और सहिष्णुता की नींव रखते हैं। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना समस्त मानवता को एक परिवार मानती है। 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' यह मंत्र धार्मिक सहिष्णुता का मूलमंत्र है। यह भाव सामाजिक स्तर पर एकता, भाईचारे और सहयोग की नींव रखता है। सनातन धर्म में यह माना जाता है कि प्रत्येक जीव में एक ही परमात्मा का अंश है, अतः किसी के साथ भेदभाव करना स्वयं ईश्वर का अपमान करना है।

वेदों एवं उपनिषदों में समरसता

ऋग्वेद में कहा गया है– ''संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्'' अर्थात् मिल–जुल कर चलो, एक स्वर में बोलो, और एक समान विचार करो। यह सामाजिक एकता का स्पष्ट संदेश है। उपनिषदों में आत्मा की एकता और अद्वैत सिद्धांत सामाजिक भेदभाव को निरस्त करता है। उपनिषद यह सिखाते हैं कि आत्मा न तो जन्म लेती है, न मरती है, वह अजर–अमर है, और सबमें एक समान है। इस सिद्धांत से यह स्पष्ट होता है कि जाति, वर्ग, धर्म या लिंग के आधार पर कोई व्यक्ति श्रेष्ठ या हीन नहीं होता। अतः सनातन धर्म सभी को समान दृष्टि से देखने की प्रेरणा देता है।

महाकाव्यों में सहिष्णुता और समरसता

रामायण में श्रीराम द्वारा शबरी, निषादराज, और वनवासियों के साथ समान व्यवहार सामाजिक समरसता का उत्कृष्ट उदाहरण है। उन्होंने जाति या वर्ग के आधार पर किसी के साथ भेद नहीं किया। महाभारत में भगवान कृष्ण ने गीता के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति के धर्म और कर्तव्य का बोध कराया, जो सामाजिक संतुलन की ओर संकेत करता है। अर्जुन को गीता में दिए गए उपदेश यह दर्शाते हैं कि कर्म और निष्ठा ही किसी व्यक्ति की पहचान है, न कि उसका जन्म। यह दृष्टिकोण सहिष्णुता और समरसता की नींव रखता है।

जाति व्यवस्था का मूल स्वरूप

सनातन धर्म में वर्ण व्यवस्था गुण और कर्म पर आधारित थी, जो समय के साथ विकृत होकर सामाजिक विषमता का कारण बनी। वास्तविक रूप में यह व्यवस्था सह–अस्तित्व और कार्य विभाजन के लिए थी, न कि भेदभाव के लिए। श्रीकृष्ण ने गीता में स्पष्ट कहा है कि ''चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः'', अर्थात् वर्ण व्यवस्था जन्म से नहीं, बल्कि गुण और कर्म पर आधारित है। दुर्भाग्यवश, समय के साथ यह व्यवस्था सामाजिक वर्चस्व का माध्यम बन गई, जिसने असमानता को जन्म दिया परंतु सनातन धर्म का मूल संदेश आज भी समता, सहयोग और सद्भाव का है।

भक्ति आंदोलन और समरसता

भक्ति आंदोलन ने सामाजिक समरसता और धार्मिक सहिष्णुता को नई दिशा दी। संत कबीर, रविदास, तुलसीदास, मीरा बाई आदि ने भक्ति के माध्यम से समाज में फैले जातिगत भेदभाव को चुनौती दी। उन्होंने यह सन्देश दिया कि ईश्वर के सामने सभी समान हैं– चाहे वे किसी भी जाति, वर्ग या लिंग से हों। कबीरदास ने कहा, 'जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान'। यह पंक्ति उस युग में क्रांतिकारी थी जब जाति के नाम पर भेदभाव चरम पर था। भक्ति आंदोलन ने जनसामान्य को धार्मिक आधिपत्य से मुक्त कर, आत्मिक अनुभव की स्वतंत्रता प्रदान की।

आधुनिक सन्दर्भ में प्रासंगिकता

वर्तमान समय में जब सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक असहिष्णुता बढ़ रही है, सनातन धर्म की शिक्षाएं अत्यंत प्रासंगिक हैं। यह धर्म विविधता में एकता, करुणा और सेवा भाव की प्रेरणा देता है। गांधीजी ने अहिंसा और सत्य के मार्ग पर चलते हुए इसी सनातन परंपरा को अपनाया। उन्होंने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को अपने जीवन में उतारा और अपने आंदोलनों के माध्यम से यह सिखाया कि प्रेम, करुणा और सहिष्णुता से ही समाज को जोड़ा जा सकता है। आधुनिक भारत में जब धर्म के नाम पर विभाजन और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है, तब सनातन धर्म के समावेशी दृष्टिकोण को अपनाना अत्यंत आवश्यक हो जाता है।

मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक प्रभाव

सनातन धर्म के नैतिक मूल्यों का व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक समरसता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह आत्मसंतोष, सह–अस्तित्व और सहयोग की भावना को बढ़ावा देता है। जब व्यक्ति यह अनुभव करता है कि संपूर्ण ब्रह्मांड में वही आत्मा व्याप्त है, तो वह अहंकार, ईर्ष्या और घृणा से मुक्त हो जाता है। यह दृष्टिकोण न केवल व्यक्तिगत संतुलन प्रदान करता है, बल्कि सामाजिक समरसता को भी सशक्त बनाता है। इससे व्यक्ति में सहनशीलता, क्षमा, संयम और सह–अस्तित्व की भावना का विकास होता है, जो एक शांतिपूर्ण समाज की नींव है।

निष्कर्ष

सनातन धर्म एक समावेशी, सहिष्णु और उदार धार्मिक प्रणाली है, जो सभी प्राणियों में एकता, समानता और सह–अस्तित्व की भावना को पोषित करती है। इसके मूल तत्व 'वसुधैव कुटुम्बकम्', 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति', तथा 'अहिंसा परमो धर्मः' समरसता और सहिष्णुता के मूल मंत्र हैं। यह धर्म समाज के प्रत्येक वर्ग को समान दृष्टि से देखता है और सभी मतों का सम्मान करता है।

शोध के निष्कर्ष स्वरूप यह स्पष्ट होता है कि सनातन धर्म केवल पूजा–पद्धति नहीं, बल्कि एक ऐसी जीवनशैली है जो सहिष्णुता और सामाजिक समरसता को व्यवहारिक जीवन में उतारने का मार्ग दिखाती है। वर्तमान समय में जब सामाजिक ताना–बाना विखंडित हो रहा है और असहिष्णुता बढ़ रही है, तब सनातन धर्म की शिक्षाएं समाज को स्थिरता, समता और सौहार्द की ओर ले जा सकती हैं इसलिए यह आवश्यक है कि सनातन धर्म के मूल तत्वों को केवल धार्मिक ग्रंथों तक सीमित न रखकर उन्हें सामाजिक नीति और शिक्षा प्रणाली का भी हिस्सा बनाया जाए, जिससे भावी पीढ़ियाँ सहिष्णुता और समरसता की भावना के साथ एक समतामूलक समाज का निर्माण कर सकें।

संदर्भ सूची

1. चिन्मयानंदय, भाष्यकार स्वामी (2015) *भगवद्गीता,* चिन्मय मिशन, मुंबई, संस्करण 2015।
2. राधाकृष्णन, एस. (2008) *उपनिषद संग्रह* (ईश, केन, कठ, मुण्डक एवं अन्य), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।
3. सरस्वती, दयानंद (2012) *यजुर्वेद टीका,* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली, संस्करण 2012।
4. सरस्वती, सत्यप्रकाश (संपादक) (2010) *ऋग्वेद,* आर्य समाज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण, 2010।
5. संपूर्णानंद (संकलकर्ता) (2012) *स्वामी विवेकानंद, विचार और दर्शन,* रामकृष्ण मिशन, कोलकाता, संस्करण, 2012।

****